“राजनीतिक धरातल पर महामना पंडित दीनदयाल उपाध्याय के एकात्मवादी मानव दर्शन की प्रासंगिकता”

मोती लाल नारायण लाल [1]

[1] **सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान), चौधरी खरताराम राजकीय महाविद्यालय भणियाणा पोकरण.**

ABSTRACT:

श्री दत्तोपन्त ठेगड़ी के शब्दों में, ‘एकात्म मानववाद का दर्शन इस युग को पं० जी की श्रेष्ठतम देन है।" हालांकि इस चिन्तन धारा में प्राचीन भारतीय संस्कृति के तत्व का प्रवाह स्पष्ट होता है, फिर भी पं० जी की दृष्टि भविष्य पर केन्द्रित है। पण्डित जी ने आधुनिक वैश्विक चुनौतियों के समक्ष पूँजीवाद एवं समाजवाद के विकल्प के रूप में एकात्म मानव दर्शन के रूप में एक नया मार्ग दिखाया है।

एकात्म मानव दर्शन व्यक्ति के जीवन व उसके सभी अंगो का समग्र विचार दर्शन है। मनुष्य प्राणी शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा का संकलित रूप है। इसलिए मानव का सर्वांगीण विचार उसके शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा, सबका संकलित विचार है। व्यक्तित्व के इन चारों पक्षों की समुचित आवश्यकताओं को पूरा करने, उनकी विविध मांगों और इच्छा-आकांक्षाओं को पूर्ण करने तथा उनके समग्र विकास के लिए भारतीय संस्कृति ने चार पुरुषार्थो का आदर्श रखा है। मनुष्य के समग्र विकास में उसकी भौतिक उन्नति और नैतिक एवं अध्यात्मिक उन्नति भी संभव है। जिससे समाज की सुयोग्य धारणा हो सके।

पण्डित जी ने इसकी आवश्यकता पर बोलते हुए कहा है कि, “एकात्म मानववाद यह शब्द और कल्पना इस समय प्रस्तुत करने को आवश्यकता क्यों प्रतीत हुई? विशेष रूप से उस समय, जबकि आज पश्चिम की ओर से कई वाद या विचार अपने देश में आ रहे हैं। अनेक व्यक्तियों का कहना है कि, यदि हमारी समस्याओं का हल पश्चिमी वादों या विचारधाराओं से हो सकता है, तो हम अपने मस्तिष्क को तकलीफ क्यों दें? यह पश्चिम की विचारधारा है केवल इसलिए इसको त्याज्य समझा जाए यह भी ठीक नहीं। ऐसी स्थिति में हमारे लिए यह उचित होगा कि हम पश्चिम के वैचारिक मंच पर जो नाटक पिछले तीन-चार सौ वर्षों में हुए हैं उनका संक्षेप में अवलोकन करें।"

'एकात्म मानववाद का सार, में पं० जी कहते हैं कि, “हमारी सम्पूर्ण व्यवस्था का केन्द्र मानव होना चाहिए। 'जो यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे के अनुसार हो। इस प्रकार उनके मत में राजनीतिक धरातल पर एकात्म मानववाद की प्रतिष्ठापना न केवल नैतिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक है वरन प्रासंगिक भी है।

KEYWORDS:

राजनीतिक, धरातल, पंडित दीनदयाल उपाध्याय, एकात्मवादी दर्शन, मानव दर्शन, नैतिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक।

PAPER ACCEPTED DATE:	PAPER PUBLISHED DATE:
28th April 2024	30th April 2024

प्रस्तावना

महानता के शिखर पर पहुँचने वाले लोगों में कुछ जन्म से महान होते हैं, कुछ पर महानता थोप दी जाती है, लेकिन कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अपने कर्मों द्वारा महानता अर्जित करते हैं। पं० जी ऐसे ही व्यक्ति थे, जिन्होंने अपने कर्मों के बल पर महानता अर्जित की थी। पं० जी भारतवर्ष के वैचारिक इतिहास के कुछ थोड़े से महापुरूषों में से एक थे, जिन्होंने भारत की राजनीति में शुचितापूर्ण शुद्धता की कल्पना की एवं उसे कार्यरूप में परिणत करने का प्रयास भी किया तथा व्यक्ति से लेकर समस्त संसार के हित का विचार प्रस्तुत किया।

25 सितम्बर 1916 धनकियाँ गांव में अपने नाना श्री चुन्नीलाल शुक्ल के घर जन्मे पं० जी के पिता श्री भगवती प्रसाद जी मथुरा के जलेसर रोड स्टेशन पर स्टेशन मास्टर के रूप में काम करते थे। पण्डित जी के माता का नाम श्रीमती रामप्यारी था।

यह वह दौर था जब सम्पूर्ण विश्व अपने साम्राज्यवादी भावना से ओत-प्रोत होकर द्विधुरी समूह में बंट कर परस्पर स्वार्थपरता की रणनीति पर कार्य कर रहा था। तथापि फ्रांस की राज्य क्रान्ति ने समग्र यूरोपीय देशों में प्राण फूँक दिये थे। जिसका परिणाम उग्र राष्ट्रवाद के रूप में प्रस्तुत हुआ एवं समस्त विश्व महायुद्ध की तरफ अग्रसर हो गया।

अनेक यूरोपीय देशों में राष्ट्रीयता की उग्र धारा अपने चरम पर पहुँच चुकी थी, साथ ही साम्राज्यवाद उनकी नीति का हिस्सा बन गया, जो प्रथम विश्व युद्ध के मूल कारणों में था। पहली बार राष्ट्रवाद की आड़ में समग्र विश्व ने ऐसा भीषण नरसंहार देखा जिसने आने वाले समय में मानव जाति को लक्षित करने का कार्य किया। पं० जी का राष्ट्रवादी चिन्तन विस्तारवादी नहीं था, बल्कि उनका उद्देश्य अपनी सांस्कृतिक पहचान को कायम रखना था। पं० जी महान देशभक्त, कथित धर्मनिरपेक्षता के विरोधी, राजनीति में शुचिता तथा सादगी की कल्पना करने वाले एकात्मवादी मानव दर्शन के अग्रदूत थे।

पं० दीनदयाल उपाध्याय और मानववाद चिंतन

भारतीय चिन्तनधारा के ऋषि परम्परा में पं० जी मानववादी चिंतन के अग्रदूत रहे हैं। हिन्दू जीवन दर्शन में नर सेवा ही नारायण 'सेवा है, का विशेष स्थान है। पण्डित जी के जीवन दर्शन की नींव ही मानववादी थी। पण्डित जी मानव जीवन के मूल्यों को समझते थे। जहाँ यूरोपियन राष्ट्र के भोग विलास को ही श्रेष्ठ जीवन मानते थे। वही पण्डित जी मानव के नैतिक उत्थान के लिए प्रयासरत रहे। उन्होंने अपने समग्र जीवन को अन्त्योदय के उत्थान में लगा दिया। पण्डित जी भेदभाव पूर्ण समाज के सदैव विरोधी रहे तथा, इस सम्बन्ध में स्वयं का उदाहरण प्रस्तुत किया है। अपने से छोटे व्यक्तियों के प्रति पण्डित जी का व्यवहार सदा निष्पक्ष, एवं सहयोगात्मक रहा।

वस्तुतः यह गुण कोई ईश्वर की ओर से पुरस्कार स्वरूप भेंट में नहीं मिला होता है, बल्कि यह व्यक्तित्व तो कठिन साधना एवं लोकसेवा का परिणाम होता है। पण्डित जी की कर्तव्यनिष्ठा थी कि छोटे से छोटा व्यक्ति भी उन्हें अपना आदमी समझता था। पण्डित जी का मानवतावाद धर्मनिष्ठ मानवतावाद था। पण्डित जी ने हिन्दू धर्मग्रन्थो के उपदेश, जिसमें मानव को ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति बताया गया है, को हृदयंगम् कर लिया था। उनके लिए नर सेवा के आगे, मत, सम्प्रदाय का महत्व नहीं के बराबर था। पण्डित जी का मानवतावाद वैभवपूर्ण जीवनयापन नहीं था, बल्कि उनका मानवतावाद नैतिकता, भ्रातृत्व, सहअस्तित्व की भावना

वाला मानवतावाद था। इस प्रकार पण्डित जी के मानवतावादी विचार ही उन्हें राष्ट्रीय एकता की ओर आकर्षित कर देश प्रेम की ओर अग्रगामी होने को प्रोत्साहित करते हैं । यही भावना मानववादी दर्शन का मूलाधार है ।

एकात्म मानव दर्शन की अवधारणा

एकात्म मानव दर्शन व्यक्ति के जीवन व उसके सभी अंगो का समग्र विचार दर्शन है । एकात्म मानववाद को कई और नाम से भी पुकारा गया है जैसे एकात्मकतावाद समन्वितमानववाद. परिपूर्ण मानववाद, समग्र मानव का चिन्तन आदि पण्डित जी ने तो एक स्थान पर इसे षटपदीवाद भी कहा है । पण्डित जी ने इसकी आवश्यकता पर बोलते हुए कहा है कि 'एकात्म मानववाद यह शब्द और कल्पना इस समय प्रस्तुत करने की आवश्यकता क्यों प्रतीत हुई? विशेष रूप से उस समय, जबकि ऑज पश्चिम की ओर से कई वाद या विचार अपने देश में आ रहे हैं । अनेक व्यक्तियों का कहना है कि, यदि हमारी समस्याओं का हल पश्चिमी वादों या विचारधाराओं से हो सकता है, तो हम अपने मस्तिष्क को तकलीफ क्यों दे? यह पश्चिम की विचारधारा है केवल इसलिए इसको त्याज्य समझा जाए यह भी ठीक नहीं । ऐसी स्थिति में हमारे लिए यह उचित होगा कि, हम पश्चिम के वैचारिक मंच पर जो नाटक पिछले तीन-चार सौ वर्षों में हुए हैं उनका संक्षेप में गूढ़ अवलोकन करें। जहाँ तक मनुष्य के समग्र विकास की बात है तो भारतीय परम्परा और संस्कृति इनमें अनुपम है । प्राचीन समय, से ही मानव के अनुत्तरीय प्रश्नों का उत्तर इस धरा पर कहीं मिला है तो वह भारत एवं भारतीय संस्कृति के द्वारा ही मिला है । पं० जी का एकात्म मानववाद इसी परम्परा की आगे की कड़ी है, जिसको स्पष्ट रूप प्रदान कर पण्डित जी कहते हैं कि, -

“एकात्ममानववाद ‘एक ऐतिहासिक विचार श्रृंखला की कड़ी के रूप में उत्पन्न हुआ । यह प्राचीन यूनान व प्राचीन भारत के आधुनिक संस्करणों 16वीं 17वीं सदी को यूरोपीय पुनर्जागरण तथा 20वीं सदी के भारतीय पुनर्जागरण के मेल का परिणाम था । थियोक्रेटिक रोमन साम्राज्य के रूप में स्थापित ईश्वरीय राजसत्ता को चुनौती दी गई थी । ईश्वर एवं रहस्यवाद के खिलाफ प्राचीन ग्रीक दर्शन के प्रकाश मे, मानववाद का प्रणयन हुआ था । 15वीं शताब्दी के मध्य कोंसटनटिनोपल के पतन (1453) के बाद भूमध्य रेखीय सभ्यता के चरित्र को खोज निकाला। कॉपरनिकस, गैलिलियों और न्यूटन के वैज्ञानिक अनुसंधानों ने चिन्तन की दिशा एवं दृष्टि को ही बदल दिया”।

डॉ महेश चंद्र शर्मा अपनी पुस्तक के माध्यम से एकात्मवादी मानव दर्शन पर अपने विचार अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं कि, “पुनर्जागरण के इसी समय में भारतीय स्वाधीनता संग्राम उदित हुआ था । एक वैचारिक मंथन शुरू हुआ, जिसमें से राजा राममोहन राय के ब्रह्मवाद, विवेकानन्द्र के समन्वित वेदांत तथा दयानन्द के आर्यत्व के संदेश स्थापित हुए थे । इसी धारा का लोकमान्य तिलक कर्मवादी स्वराज्यवाद, अरविन्द के वेदान्तिक स्वराज्य गोखले रानाडे व नौरोजी के उदारवादी सुराज्यवाद के चिन्तन के रूप में विकास हुआ। इसी को गांधी जी के रामराज्य व सर्वोदय के विचारों ने, नेहरू के लोकतन्त्रवादी समाजवाद ने तथा आचार्य नरेन्द्रदेव के, भारतीय समाजवाद ने और आगे बढ़ाया। साम्यवाद की भी भारतीयतापरक वैदान्तिक व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई । प्रतिभा सम्पन्न मार्क्सवादी विचारक एम०एन० राय ने गैर वामपंथी बनकर नव मानववाद का विचार प्रस्तुत किया। विनायक दामोदर सावरकर ने हिदुत्व दर्शन को राजनीतिक विचारधारा का आधार बनाया। इस सारे चिन्तन में भारतीय पुर्नजागरण प्रतिपादित पाश्चात्य एवं भारतीय विचारों का परस्पर मंथन व सम्मिश्रण हो रहा था । इस दौरान भारत स्वतंत्र हुआ । विचार मंथन चलता ही रहा। इस विचार श्रृंखला की नवीनतम कड़ी है, पं० दीनदयाल उपाध्याय प्रणीत एकात्ममानववाद”।

एकात्मवादी मानव दर्शन एवं पं० दीनदयाल जी

पण्डित दीनदयाल उपाध्याय का व्यक्तित्व संस्कृतनिष्ठ था। इसलिए उनके दर्शन एकात्ममानव का आधार भी संस्कृति थी । भारतीय संस्कृति से पण्डित जी को विशेष प्रेम था । भारतीय राजनीति के स्वरूप में संस्कृति का समावेश वह आवश्यक मानते थे । उनका विचार था कि संस्कृति का प्रभाव राजव्यवस्था पर भी पड़ता है । उनके मत में संस्कृति, सभ्यता, नैतिक मूल्य, चारित्रिक आदर्श ही राज्य व्यवस्था को अनुशासन, सौंदर्य, निष्पक्षता एवं गरिमा प्रदान करते हैं । ये सभी तत्व हमारी भारतीय संस्कृति में विद्यमान हैं। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति की आस्था ने उन्हें राजनीति में एक नये स्वरूप की कल्पनाओं की ओर अग्रसर किया जिनकी परिपूर्ति के लिए वह निरंतर अपने कर्म पथ पर गतिशील रहे । सिर्फ एकात्म मानववाद को स्थापित करने के लिए ही वह अपनी संस्कृति और सभ्यता से परिपूर्ण जीवन दृष्टि का आलिंगन करते हैं । दीनदयाल जी ने भारतीय संस्कृति को ‘खंडित संस्कृति’ नहीं, अपितु ‘एकात्मवादी संस्कृति’ माना है। उनकी दृष्टि में “भारतीय संस्कृति की पहली विशेषता यह है कि वह संपूर्ण जीवन का, संपूर्ण सृष्टि का संकलित विचार करती है। उसका दृष्टिकोण एकात्मवादी है ।

एकात्म मानववाद की समस्त विशेषताएं पं० जी अपनी भारतीय संस्कृति में देखते हैं वे कहते हैं कि, भारतीय संस्कृति का दृष्टिकोण एकात्मवादी, अर्थात् Integrated है । टुकड़ों टुकड़ों में विचार करना विशेषज्ञ की दृष्टि से ठीक हो सकता है, परन्तु व्यवहारिक दृष्टि से उपयुक्त नहीं । पश्चिम की समस्या का मुख्य कारण उनका जीवन के सम्बन्ध में टुकड़ों टुकड़ों में विचार तथा फिर उन सबको थेगली लगाकर जोड़ने का प्रयत्न है ।“ वे आगे कहते है कि, विविधता में एकता अथवा एकता का विविध रूपों में व्यक्तीकरण ही भारतीय संस्कृति का केन्द्रस्थ विचार है । यदि इस तथ्य को हमने हृदयंगम कर लिया तो फिर विभिन्न सत्ताओं के बीच संघर्ष नहीं रहेगा । यदि संघर्ष है तो वह प्रकृति का अथवा संस्कृति का द्योतक नहीं, विकृति का द्योतक है । अर्थात् जिस मत्स्यन्याय या जीवन संघर्ष को पश्चिम के लोगों ने ढूँढ़कर निकाला, उसका ज्ञान हमारे दर्शनिकों को पूर्व से ही था”।

भारतीय संस्कृति के सनातन प्रभाव का आंकलन पण्डित जी ने निश्चित रूप से किया था । यही कारण था कि उन्होने एकात्ममानववाद में भारतीय संस्कृति के सिद्धान्तों का व्यापक रूप से प्रयोग किया ।

राजनीतिक धरातल पर पंडित जी के एकात्मवादी मानव दर्शन की प्रासंगिकता

पं० दीनदयाल उपाध्याय एक नेता से कहीं अधिक एक समाजसेवी थे। लेकिन राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के पूर्व संघचालक श्री गुरुगोलवरकर जी के आग्रह पर उन्होंने राजनीति में पदार्पण किया । राजनीति में रहते हुए भी पण्डित जी ने कभी अपने सिद्धान्तों से समझौता नहीं किया । तथा भारतीय राजनीति में एक आदर्श कायम किया ।

यद्यपि पण्डित जी के राजनीति में आने से पहले ही भारतीय राजनीति का तात्कालीन स्वरूप इस योग्य हो गया था कि अब किसी ऐसे राजनीतिक संगठन की आवश्यकता महसूस की जाने लगी जो भारत के मूल सिद्धान्तों को सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के माध्यम से एक बार पुनः प्रासंगिक करने का कार्य कर सके ।

अस्तु एकात्ममानव वाद के प्रणेता पण्डित दीनदयाल उपाध्याय का राजनीतिक चिंतन एवं वैयक्तिक और वैचारिक वैशिष्ट्य उनके समकालीन राजनीतिक चितंको में उन्हें सर्वथा श्रेष्ठ बनाता है । वैचारिक राजनीतिक धरातल पर वे सुचितापूर्ण राजनीति के वाहक थे, एक विशेष राजनीतिक दल से सम्बन्धित होने के बाद भी पण्डित जी दलगत राजनीति से ऊपर थे। यह गुण उनके अजातशत्रु होने का मुख्य कारण रहा । विश्व एकात्मकता के विचार को वह मानव कल्याण के लिए सर्वोपरि मानते थे, साधन और साध्य की समान पवित्रता उन्हें किसी राष्ट्र ऋषि के समकक्ष खड़ा कर देती है ।

भारत के सांस्कृतिक गौरव को पुनः स्थापित करने का जो स्वप्न पण्डित दीनदयाल ने देखा था उसके लिए वह आजीवन प्रयासरत रहे, राजनीति को कभी पेशा नहीं माना, बल्कि राष्ट्र धर्म के पालन का एक साधन माना। सैद्धान्तिक राजनीति एवं सामाजिक उन्नति की जो रूपरेखा पण्डित जी ने रखी, वह आगे चलकर एक दर्शन के रूप में स्थापित हुई। इस सुखद स्वप्न को पूर्ण करने के लिए पण्डित जी ने गृहत्याग नहीं किया बल्कि सम्पूर्ण धरा को ही अपना परिवार बना लिया । एक तरफ जहां विश्व के अनेक विचारधाराओं की उत्पत्ति परस्पर टकराव रही है, प्रत्येक विचार दूसरे की प्रतिक्रिया स्वरूप आया, और मानव जीवन की समस्याओं पर खण्डित-विचार द्वारा उत्तर खोजने का प्रयत्न किया गया, वही पं० जी का वैचारिक दर्शन किसी प्रतिक्रिया स्वरूप नहीं आया था । बल्कि एक लम्बे कालखण्ड के वैचारिक शोध का परिणाम था । पण्डित जी ने मानव जीवन का सर्वांगीण विचार किया, और समाधान प्रस्तुत किया । पण्डित जी के अनुसार पूंजीवाद में मानव जीवन को एक यांत्रिक मानव माना, वही साम्यवाद ने केवल पेट भरना ही महत्वपूर्ण माना, मनुष्य के बौद्धिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक विकास के तरफ किसी ने भी ध्यान नहीं दिया, पण्डित जी ने इस पर सम्यक् विचार किया और मानव कल्याणार्य एकात्म मानव दर्शन के रूप में एक ऐसा विचार विश्व समुदाय के समक्ष रखा, जिससे मानव के शारीरिक सुख ही नहीं बल्कि आध्यात्मिक सुख की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त हुआ ।

एकात्म मानव दर्शन में मन, बुद्धि, आत्मा का उपभोग के साथ-साथ संयम और समर्पण का अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों का तथा व्यक्ति के साथ-साथ समष्टि, सृष्टि एवं परमेष्टि तक की एकात्मकता समाहित है । इसी से व्यक्ति और समष्टि की समन्वित भौतिक और अध्यात्मिक उन्नति संभव हो सकती है । एकात्म मानव दर्शन की विवेचना करते हुए पं० जी कहते हैं कि स्वतंत्रता एवं समानता जैसे गुणों का प्रथक् अस्तित्व नहीं है बल्कि यह तो

आत्मा के स्वभाविक गुण है। आध्यात्म का चिन्तन ही उसे पूर्णता प्रदान करता है । एकात्ममानवदर्शन इस सत्य को स्थापित करता है, जिसमें समाज के प्रति व्यक्ति की आत्मीयता व्यक्ति तथा समाज के मध्य संतुलन स्थापित करने का कार्य करती है। सही अर्थो में एकात्ममानव दर्शन एक समग्र विचार दर्शन है। पण्डित दीनदयाल जी धर्म को आधारभूत पुरुषार्थ स्वीकार करते है। कहते है कि धर्म के आधार पर ही अर्थ और काम की प्राप्ति सम्भव है।

पण्डित दीनदयाल जी ने गरीबों, वंचितों को अपने वैचारिकी दृष्टिकोण से दरिद्रनारायण की संज्ञा दी है। उनका मानना था कि समाज की आर्थिक प्रगति का माप उपर से नहीं बल्कि नीचे से होना चाहिए। वे भारत को धर्मराज्य की अवधारणा के अनुरूप राष्ट्र के रूप में विकसित करना चाहते थे, यद्यपि वह मजहबी राष्ट्र नहीं होगा बल्कि एक ऐसी व्यवस्था होगी जो राज्य एवं सत्ता को उसके कर्तव्यों का बोध करायेगा, व्यक्ति को अपने अन्तःकरण के अनुसार उपासना की स्वतन्त्रता देगा, विधि के शासन का आदर्श भी उपस्थित करेगा, अतः इस धर्मराज में ही जनकल्याणकारी राज्य का आदर्श एक प्रकार से स्थित है।

इस प्रकार पं० जी का राजनैतिक विचार एकात्ममानव चिंतन के अनुरूप ही है, राजनीति में ऐसे कम व्यक्ति ही मिलेगे जिन्होंने अपनी कथनी व करनी में कोई भेद नहीं किया। जिनका सम्पूर्ण जीवन ही आदर्शमय हो जो सभी प्रकार के लोभ से मुक्त हो। एक श्रेष्ठ लोकतान्त्रिक राज्य के लिए एक अच्छी सरकार के महत्व पर पण्डित जी का प्रस्ताव यह था कि अच्छी सरकार का निर्माण एक अच्छे सैद्धान्तिक दल द्वारा ही सम्भव है, अतः दलों का गठन वैचारिक स्तर पर होना चाहिए।

एकात्ममानव दर्शन का मूल उद्देश्य व्यक्ति और समाज की मौलिक जरूरतों में सामंजस्य स्थापित करके प्रत्येक व्यक्ति को गरिमापूर्ण जीवन सुनिश्चित करना है। यह दर्शन न केवल राजनीतिक वरन् आर्थिक सामाजिक, लोकतंत्र एवं स्वतंत्रता को भी बढ़ाता है । यह विविधतापूर्ण भारतीय समाज के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार लोकतंत्र कि सुदृढ़ता को बनाए रखने के लिए पंडित दीनदयाल के एकात्म मानववादी विचार अत्यधिक प्रासंगिक है क्योंकि उनके इस दर्शन में लोक कल्याण, लोक हित, लोक सम्मान अपनी भारतीय संस्कृति के गौरव के साथ समाहित है और जहाँ भारतीय संस्कृति का गौरव हैं वहाँ लोकतंत्र स्वयं में उत्कृष्ट स्वरूप वाला होगा। वर्तमान सत्ता उनके विचारों को अंगीकार करते हुए प्रतीत होती हैं क्योंकि आज इस राष्ट्र को पुनः सोने की चिड़िया बनाने के लिए, पुनः विकास, गति प्रदान करने के लिए, विकसित स्वरूप प्रदान करने के लिए, सुख-शांति-वैभव और सौहार्द प्रदान करने के लिए पंडित दीन दयाल उपाध्याय के विचारों की आवश्यकता है। जब तक राजनीति उनके विचारों से मंडित नहीं होगी तब तक यह सब कपोल कल्पना मात्र रहेगा यह सत्य है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि, आज सत्ता में वह पार्टी है जो पं० दीनदयाल उपाध्याय के वैचारिकी को अपना रोल मॉडल मानती है। भाजपा का मूल दर्शन ही एकात्म मानव दर्शन है। वर्तमान समय के परिस्थितियों के अनुसार पं० जी के वैचारिक दृष्टिकोण को बड़े स्तर पर आगे बढ़ाना देश के लिए हितकर है। और सरकार इस दिशा में आगे भी बढ़ रही है। यही सही समय है जब स्वदेशी वस्तुओं पर निर्भरता बढ़ानी होगी। चाहे मजदूरों का पलायन हो, किसानों की समस्याएं रोजगार के अवसर हो, वर्तमान सरकार ने इसे बखूबी समझा है। और इन तात्कालिक संकट के निवारण के लिए आगे बढ़ रही है। पण्डित जी द्वारा उस समय कही गई बातें सत्य के कितने करीब हैं, यह समझा जा सकता है। उनके आत्मनिर्भर भारतवर्ष के सुखद स्वप्न को पूरा करने के लिए G-20 सम्मेलन एक सफल गतिविधि रही और भारत को स्वर्ग बनाने के लिए सरकार ने एजेंडा 2047 के रूप में कदम भी बढ़ा दिया है।

REFERENCES

1. पण्डित दीनदयाल उपाध्याप, राष्ट्रवाद की सही कल्पना, एकात्ममानव दर्शन, सुरुचि प्रकाशन, दिल्ली, 1991.

2. बी०एम० शर्मा. राम कृष्णदत्त शर्मा, सविता शर्मा, भारतीय राजनीतिक विचारक, रावत पब्लिकेशन जयपुर एवं दिल्ली, 2005.

3. डॉ० मदन लाल वर्मा 'क्रान्त', स्वाधीनता संग्राम के क्रान्तिकारी साहित्य का इतिहास, 2006, प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली, भाग-3.

4. दीनदयाल उपाध्याय, एकात्ममानव वाद, दीनदयाल उपाध्याय प्रकाशन, विधायक निवास, लखनऊ, 2011.

5. डॉ० प्रयाग नारायण त्रिपाठी, महात्मा गाँधी और पण्डित दीनदयाल उपाध्याय के जीवन दर्शन में साम्य, लोकहित प्रकाशन, संस्कृति भवन, राजेन्द्र नगर लखनऊ, 2013.

6. विश्वनाथ नारायण देवघर, पण्डित दीनदयाल उपाध्याय विचार दर्शन, खण्ड-7, व्यक्ति दर्शन, सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014.

7. चन्द्रशेखर परमानन्द भिषीकर, पण्डित दीनदयाल उपाध्याय, विचार-दर्शन, खण्ड-5, राष्ट्र की अवधारणा, सुरुचि प्रकाशन, केशव कुंज झण्डवाला, नई दिल्ली 2014.

8. दत्तोमन्त ठेंगड़ी, तत्वजिज्ञासा, पण्डित दीनदयाल उपाध्याय विचार दर्शन, खण्ड-1, सुरुचि प्रकाशन, केशव कुंज, झण्डेवाला नई दिल्ली 2016.

9. डॉ० महेश चन्द्र शर्मा, दीनदयाल उपाध्याय, कर्त्तव्य एवं विचार, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2018.